आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 3/अंक 5/दिसंबर 2023
Received:07/12/2023; Accepted:12/12/2023; Published:26/12/2023

'उपन्यास-यात्रा और किशोरीलाल गोस्वामी'

-डॉ.चैताली सिन्हा
सहायक प्राध्यापक,
शहीद भगत सिंह कॉलेज, सांध्य
drchaitalisinha2023@gmail.com

डॉ.चैताली सिन्हा,**'उपन्यास-यात्रा और किशोरीलाल गोस्वामी'**, आखर हिंदी पत्रिका, खंड 3/अंक 5/दिसंबर 2023, (490-507)

'कथा' और 'इतिहास' की प्रकृति एक-दूसरे के इतने सन्निकट है कि दोनों का एक-दूसरे में अंतर्भुक्त हो जाना स्वाभाविक है। 'कथा' मनुष्य-जीवन के अनुभवों का जीता-जागता चित्र है और 'इतिहास' इस पृथ्वी पर मनुष्यता की धारावाहिक कहानी है। अतः दोनों का संबंध सहज है। प्राचीन साहित्य में ऐतिहासिक काव्य, ऐतिहासिक नाटक और ऐतिहासिक आख्यायिकाएं प्रचुर हैं। 'कथा' के नवीन रूप 'उपन्यास' में 'इतिहास' का प्रयोग उसके उद्भव के साथ ही होने लगा था। भारतीय कथा परंपरा मिथक से आरंभ होती है। जिसमें शिव को आदि कथा वाचक (कथक) कहा गया है, शिव ने पत्नी पार्वती को महाकाव्यात्मक कथा सुनाई थी, जिसे गुणाढ्य ने 'बृहत्कथा' के रूप में लिपिबद्ध किया। कथा की यह परंपरा भारत में किस्सा, कहानी, चरित, कादम्बरी और दास्तान आदि रूपों में सदियों से मौजूद थी। भारतीय कथा परंपरा में आख्यानों की एक लम्बी परंपरा मिलती है। इस प्रकार के आख्यानों में ऐतिहासिक, काल्पनिक और पौराणिक कथाएं कही जाती रही हैं। महाभारत, रामचरितमानस, हर्षचरित, कादम्बरी, दशकुमारचरित आदि भारत में आख्यान परंपरा की कुछ उपलब्धियां हैं, जिनमें लोककथाओं और कल्पना का मिश्रण है। इनकी शैली काव्यात्मक अवश्य है परंतु यह काव्य नहीं है, बल्कि कथाएं हैं, जो वर्णनात्मक शैली में लिखी गई हैं। इसे आख्यानपरक शैली भी कहते हैं। "'आख्यान' (आ+ख्या+ल्युट् (अन) भावे) का सामान्य अर्थ है कथन, निवेदन, उक्ति या प्रतिवचन जिसका विशेष अर्थ है- भेदक धर्म और दूसरा अर्थ है पुरावृत्तकथन - पुरावृत्तकथन यानी ऐतिहासिक कहानी और पौराणिक कथा। हिन्दी में यह शब्द प्रायः प्राचीन कथानक या वृत्तांत के ही अर्थ में प्रयुक्त होता है। सीमित अर्थ में कहें तो

ऐतिहासिक कथानक, पूर्ववृत्त-कथन ।"1 भारतीय भाषाओं में कथा और आख्यायिका जैसे शब्द सीधे संस्कृत से आए हैं।

'कथा' और 'आख्यायिका' गद्य-काव्य के दो भेद हैं। गद्य का उद्भव आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने गुप्तकाल से माना है। उनके अनुसार गुप्त-सम्राटों के सुदृढ साम्राज्य ने भारतीय जनसमूह में नवीन राष्ट्रीयता और विद्या-प्रेम का संचार किया । यद्यपि वैदिक साहित्य में गद्य-पद्य में लिखी हुई कहानियों की कमी नहीं है पर जिसे हम अलंकृत गद्य काव्य कहते हैं, निश्चित रूप से उसका प्रचार गुप्तकाल में ही हुआ।

गिरनार के महाक्षत्रप रुद्रदामा में जो खुदाई हुई थी, उसमें से प्राप्त लेख से यह प्रमाणित हुआ है कि सन् 150 ई. से पहले ही संस्कृत में सुन्दर गद्यकाव्य लिखे जा चुके थे। जिसे गद्य-काव्य का एक सुंदर नमूना माना जाता है। इस लेख में महाक्षत्रप ने स्वयं को 'स्फुटलघु-मधुर-चित्र-कांत-शब्द-समयोदारालंकृत गद्य-पद्य' का मर्मज्ञ बताया है। इससे यह सिद्ध होता है कि उस समय तक केवल अलंकृत गद्यों के ही नहीं, अलंकृत शास्त्र भी अस्तित्व में आ चुका था। इसका दूसरा प्रमाण वह है जिसे सम्राट समुद्रगुप्त ने प्रयाग के स्तंभ पर हरिषेण के द्वारा रची गई प्रशस्ति खुदवाई थी। "हरिषेण ने इस प्रशस्ति को संभवतः सन् 530 ई. में लिखा होगा। सुबंधु और बाणभट्ट ने अपने रोमांसों के लिए जिस जाति का गद्य लिखा है, इस प्रशस्ति का गद्य उसी जाति का है। हरिषेण के इस काव्य से निश्चित रूप से प्रमाणित होता है कि इससे पहले भी गद्य-काव्य का अस्तित्व था।"2

गद्य-काव्य के दो भेद बताए गए हैं- कथा और आख्यायिका। "'कथा' शब्द की व्युत्पत्ति 'कथ' धातु से हुई है, जिसका साधारण अर्थ है- 'वह जो कही जाए।' कथाओं को प्रधानतः दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है– 1. इतिहास-पुराण की कथाएं और 2. कल्पित कथाएं।"3 इसी संदर्भ में 'आख्यायिका' (आ+ख्या+णवुल) शब्द को यदि देखें तो इसका साधारण अर्थ है- कहानी, वृत्तांत एवं किस्सा। "इसका लक्षण 'अमरकोश' में 'आख्यायिकोपलब्धार्था' (१/६/५) अर्थात् जिसका विषय ज्ञात या सत्य हो, ऐसा किया गया है। दूसरा प्रकार 'कथा' कहलाता है, जिसका लक्षण 'अमरकोश' में 'प्रबंध-कथा' अर्थात् जिसका विषय काल्पनिक हो, सत्य जिसमें अल्प ही हो, ऐसा किया गया है । गद्य-काव्य के इन दोनों प्रकारों के उदाहरण क्रमशः 'हर्षचरित' और 'कादंबरी' माने जाते हैं।"4 'साहित्यदर्पण' के अनुसार कथा में सरस वस्तु गद्य में कही जाएगी,

उसमें कहीं आर्या छंद (यह एक मात्रिक छंद है। अर्थात् जिस छंद के प्रथम और तृतीय चरण में 12-12 मात्राएँ, द्वितीय चरण में 18 मात्राएँ और चतुर्थ चरण में 15 मात्राएँ हों, उसे आर्या छंद कहते हैं।) भी होंगे कहीं वक्त्र और अपवक्त्र भी होंगे। शुरू में पद्यबद्ध नमस्कार होगा और फिर साधु प्रशंसा और दुर्जन-निंदा होगी।

परंतु दण्डी इस भेद को नहीं मानते, दण्डी के अनुसार – "'तत्कथाख्यायिकेत्येकाजाति: संज्ञाद्वयांगिता' (काव्यादर्श, १ : २८) कथा और आख्यायिका में भेद व्यर्थ है"5 क्योंकि कथा-वाचन उसका मुख्य पात्र करे अथवा अन्य कोई और, इससे अधिक फर्क नहीं पड़ता। यह तो नितांत ऊपरी बातें हैं। "वस्तुतः कथा और आख्यायिका ये दो नाम ही भर हैं, दोनों एक ही जाति की चीजें हैं। दण्डी का कहना ठीक है। परंतु आख्यायिका नाम से प्रचलित ग्रंथों को देखकर विचार किया जाए तो ऐसा जान पड़ता है कि कथा की कहानी कल्पित हुआ करती थी और आख्यायिका की ऐतिहासिक। 'कादंबरी' कथा है और 'हर्षचरित' आख्यायिका। कहा गया है कि एक का वक्ता स्वयं नायक होगा और दूसरी का वक्ता नायक होना कोई अनिवार्य नहीं।"6 उपन्यास पद दो शब्दों के मेल से बना है, उप अर्थात् समीप और न्यास अर्थात् थाती। जिसका अर्थ है (मनुष्य के) निकट रखी हुई वस्तु। जिसके अध्ययन से ऐसा प्रतीत हो कि इसमें हमारे निज के जीवन का ही प्रतिबिंब है, जिसमें हमारी ही कथा को हमारी ही भाषा में अभिव्यक्ति दी गई हो। आधुनिक युग में जिस गद्य साहित्य के लिए इसका प्रयोग किया जाता है, उसकी प्रकृति को स्पष्ट करने में 'उपन्यास' शब्द सर्वाधिक उपयोगी है। देखा जाए तो 'उपन्यास' पद का प्रयोग प्राचीन संस्कृत साहित्य में भी लक्षित होती है। 'न्यू इंगलिश डिक्शनरी' के अनुसार उपन्यास– "बृहत् आकार का गद्य-आख्यान या वृत्तान्त जिसके अंतर्गत वास्तविक जीवन के प्रतिनिधित्व का दावा करनेवाले पात्रों और कार्यों को कथानक में चित्रित किया जाता है।"7

उक्त सभी परिभाषाओं का सार यही है कि उपन्यास वह है जिसमें मानव-जीवन का प्रतिनिधित्व हो, घटनाएं श्रृंखलाबद्ध हों, यथार्थ जीवन का चित्रण हो।

हिन्दी में 'नॉवेल' के अर्थ में 'उपन्यास' का प्रथम प्रयोग सन् 1875 ई. में हुआ। जबकि बांगला में 'नॉवेल' के अर्थ में 'उपन्यास' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम भूदेव मुखोपाध्याय ने सन् 1862 ई. में किया था। इसलिए उपन्यास को गद्य की सबसे आधुनिक विधा कहा जाता है। कुछ विद्वानों के अनुसार संस्कृत की जो कथा और आख्यायिकाएं हैं, वह उपन्यास का आधुनिक रूप है, कुछ विद्वानों के अनुसार यह पश्चिम के 'novel' पर आधारित विधा है।

भारतीय भाषाओं के प्रारंभिक उपन्यास लेखन पर कादंबरी और दशकुमारचरित का स्पष्ट प्रभाव भी कुछ विद्वान् देखते हैं। गोपाल राय के अनुसार ईसवी सन् की पहली सहस्त्राब्दी में दुनिया की किसी भी भाषा में उपन्यास नहीं मिलता। इसका उल्लेख भोलाभाई पटेल ने भी अपने लेख 'उपन्यास से नॉवेल तक' में किया है। संभवतः उपन्यास के उदय एवं उसके विकास हेतु जिन परिस्थितियों की अपेक्षा की गई थीं, उसका अस्तित्व प्रथम सहस्त्राब्दी तक भी नहीं आ पाई थीं।...उपन्यास के फलने-फुलने के लिए जिन आवश्यक बुनियादी संरचना के रूप में गद्य का विकास एवं मुद्रण यंत्र का आविष्कार हुआ, उससे गद्य के विकास में अभूतपूर्व तेज़ी आयी। पूंजीवाद के साथ-साथ मध्यवर्ग का भी विकास हुआ। "मध्यवर्ग मार्क्सवादी दर्शन का शब्द है। यह उस वर्ग के लोगों को अभिव्यक्त करता है, जो किसी पूंजीवादी समाज में सत्ताधारी वर्ग और उत्पादक वर्ग के बीच में होते हैं। दरअसल पूंजीवादी व्यवस्था में दो मुख्य वर्ग होते हैं- बुर्जुआ और सर्वहारा। लेकिन इनके बीच एक अन्य वर्ग भी होता है जिसे मध्यवर्ग कहते हैं। ऐतिहासिक विकास क्रम में 19वीं सदी के दौरान जब औद्योगिक क्रांति के साथ बुर्जुआ व सर्वहारा वर्ग उत्पन्न हुए उसके साथ ही मध्यवर्ग भी अस्तित्व में आया।"8

परंतु यह भी सत्य है कि मध्यवर्ग का अस्तित्व 19वीं सदी से पूर्व भी था। उदाहरण के लिए "चौदहवीं-पंद्रहवीं शताब्दी में यूरोप में मध्यवर्गीय पाठक का जन्म हुआ, जिन्होंने यूरोपीय उपन्यास के उदय के लिए बुनियादी संरचना के निर्माण में योग दिया। फलस्वरूप सत्रहवीं शताब्दी के पूर्व ही यूरोप में उपन्यास अस्तित्व में आ गया।"9 भारत देश में इस प्रकार की परिस्थितियों का निर्माण औपनिवेशिक शासन के बाद हुआ। प्रायः यह माना जाता है कि उन्नीसवीं शताब्दी में आधुनिक विचारों का उदय हुआ एवं सामाजिक विरोध तथा धार्मिक मतभेद भारत में यूरोपीय विचारों और संस्थाओं के प्रवेश का परिणाम थी। ब्रिटिश हुकूमत की हिन्दुस्तान की जनता को सभ्य बनाने की चालाकी और अंग्रेज़ी शिक्षा के प्रचार-प्रसार द्वारा उन्हें लाभ पहुंचाने की झूठी शर्तों से धन्य करने की जो छवि अंग्रेज़ी हुकूमत ने प्रस्तुत की थी, वह प्रभावी ढांचा आगे चलकर ब्रिटिश उपनिवेशवादी तथा प्रशासक-इतिहासकारों के लिए अत्यंत कारगर सिद्ध हुआ। "सूत्र बहुत सरल था : जब भारतीयों का यूरोपीय इतिहास, संस्थाओं तथा भाषाओं से परिचय हुआ, तो वे उसके स्वतंत्रता, बुद्धिवाद तथा मानवतावाद के विचारों से प्रभावित हुए और इस प्रभाव ने एक तरह से 'खुल जा सिम-सिम' वाले मंत्र का काम किया, जिसके

फलस्वरूप भारतीय अपनी संस्थाओं को आलोचनात्मक दृष्टि से देखने लगे और परिणामतः सुधार की हलचलें आरंभ कर दीं।"10

उपर्युक्त उदाहरण से स्पष्ट है कि उपन्यास के लिए जो पृष्ठभूमि तैयार हुई, उसके लिए कहीं न कहीं उक्त परिस्थितियाँ ही ज़िम्मेदार रहीं। हालाँकि यह एक अलग बात थी कि 'नॉवेल' अंग्रेज़ी साहित्य में ही नहीं यूरोपीय साहित्य के लिए भी 'नया' था। उपन्यास का उदय यूरोप में भी अठारहवीं सदी में हुआ था। संभवतः पश्चिमी देशों में गद्य-कथाएं भारतीय परंपरा जैसी तो थीं ही नहीं जितना कि प्राचीन और मध्ययुग में मिलती हैं। "सामान्य कथा संदर्भ में विचार करें तो वहाँ आज की लोकप्रिय विधा उपन्यास का स्वरूप अभी मात्र दो शती के आयुष्य वाला है। सर्वांतीस की प्रसिद्ध स्पेनिश कथा 'दोन किहोते' (डॉन क्विक्ज़ोट) को छोड़ दें तो कह सकते हैं कि डेफो, रिचर्डसन् और फीलिंडंग ने अठारहवीं सदी में Novel का रूप प्रतिष्ठित किया। यूरोकेंद्री रस-रूचि और विवेचन यूरोपीय देशों द्वारा संस्थापित संस्थानों में प्रतिष्ठित हुए और आज भी वैसे ही हैं। अतः अब आधुनिक दक्षिण अमेरिका के स्पेनिश लेखक मार्क्वेज अपना उपन्यास 'One Hundred Years of Solitude' ('एकांत के सौ वर्ष') लेकर आते हैं तब उनके realism के पूर्व विशेषण जोड़ना पड़ता है magic (realism)।" 11

प्रसिद्ध पाश्चात्य समीक्षक सेंट्सबरी का यह मानना है कि उपन्यास के पूर्व रूप का इतिहास बहुत प्राचीन है और यह इतिहास वही है जो रम्याख्यान (रोमांस) का है। वहीं दूसरी ओर ऐसे बहुत-से विद्वान् भी हैं जिन्होंने उसे नितांत एक नवीन विधा माना है। उनके मतानुसार 'उपन्यास' का आरंभ विश्व-साहित्य में यूरोपीय पुनर्जागरण के बाद हुआ। पुनर्जागरण यूरोप की वह महान क्रांति थी, जिसने मध्य युग की जड़ता को, रूढ़ियों और अंधविश्वासों को, गॉथिक वास्तु-विद्या एवं संकीर्ण दृष्टिकोण को, ह्रासोन्मुखी अर्थ-व्यवस्था एवं सामंतीय अ-राष्ट्रीयता को नष्ट कर उसे पतन की राह पर बहा दिया था। "उनके स्थान पर संदेहवाद, व्यक्तिवाद, पदार्थवाद तथा मुक्ति आत्माभिव्यक्ति के साथ-साथ एक गतिशील आर्थिक व्यवस्था और राष्ट्रीयता को प्रतिष्ठित किया। इसी नितांत नई गतिशीलता और सक्रियता के प्रतिफलन के रूप में उपन्यास की नई विधा का उदय हुआ।"12 पुनर्जागरण के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण उपन्यास ने उसकी कई प्रवृत्तियों को स्वयं में समाहित की हैं। ब्रिटिश औपनिवेशिक काल में निबंध एवं कविता इत्यादि अन्य अनेक साहित्य स्वरूपों के साथ उपन्यास का उद्भव हुआ और लोकप्रिय बना। मुद्रण-यंत्रों के प्रचार-प्रसार के परिणामस्वरूप समाचारपत्रों के प्रकाशन एवं

उसके लिए गद्य लेखन ने उपन्यासों की पृष्ठभूमि निर्मित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। पश्चिम से जुड़े होने के कारण जिस प्रकार की रूपक-कथाएं हमारे यहाँ आयीं, वह थी- जॉन बनयन कृत 'The Pilgrim Progress'।

ऐसे में देखा जाए तो उपन्यास गद्य-विधा का सर्वाधिक नवीनतम रूप है। यह आधुनिक युग की देन है एवं नये गद्य के प्रचार-प्रसार के साथ ही इसका भी प्रचार-प्रसार होना बहुत स्वाभाविक था। हालांकि कुछ लोग उपन्यास के रूप का विकास संस्कृत के प्राचीन कथाओं जैसे- 'दशकुमारचरित','स्वप्नवासवदत्ता','हर्षचरित' आदि से मानते हैं। परंतु उन कथाओं में उपन्यास-कला का नितांत अभाव है एवं उनकी प्रकृति तथा उपन्यास की प्रकृति में बहुत अंतर है। हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार– "यह गलत धारणा है कि उपन्यास और कहानियां संस्कृत की कथा और आख्यायिकाओं की सीधी संतान हैं। कथा और आख्यायिका नाम मात्र के गद्य हैं। उनमें वह झंकार है जो छंद है, जो छंद का प्राण है। उपन्यास तथ्य-जगत से बहुत संपृक्त है। वह विशुद्ध गद्य-युग की उपज है। उसकी प्रकृति में गद्य का सहज, स्वछन्द प्रवाह है। उपन्यास में दुनिया जैसी है, वैसी ही चित्रित करने का प्रयास प्रधान होता है। कथा-आख्यायिकाओं का लेखक पुराने कवि की भांति कल्पना द्वारा एक रसमय लोक का निर्माण करता है। वस्तुतः कथा-आख्यायिकाएँ काव्य के पास पड़ती हैं और उपन्यास तथ्य-प्रधान जगत के पास।"13

उपन्यास में भले ही दुनिया जैसी है उसे वैसा ही चित्रित करने का प्रयास प्रधान होता हो, परंतु जब उपन्यास में इतिहास को सम्मिलित करने की बात की जाती है तो वह किसी देश के काल विशेष के विशिष्ट वातावरण की उद्भावना होती है। इसमें नीरस विवरण मात्र नहीं होता, इसमें उस सत्य का प्रतिफलन भी हो जाता है, जो प्रायः इतिहास के क्षेत्र से परे समझा जाता है। इतिहास में महान् घटनाओं, वृत्तों, राजनीतिक-सामाजिक तथा आर्थिक आंदोलनों का चित्रण होता है, परंतु यह मानवीय-जीवन की सूक्ष्मातिसूक्ष्म अंतर दृष्टि को छूने में असमर्थ रहता है। इतिहासकार जहाँ विफल हो जाता है, वहाँ उपन्यासकार सफल होता है। उपर्युक्त त्रुटि का परिहार उपन्यासकार की कल्पना के द्वारा हो जाता है। इसी संदर्भ में उपन्यास की कुछ परिभाषाएं यहाँ उद्धृत करना उचित होगा।

वेब्सटर डिक्शनरी के अनुसार - "उपन्यास गद्यमय आख्यान अथवा उचित आकार का वृत्त है, जिसके कथानक में यथार्थ जीवन के प्रदर्शन का प्रयत्न करनेवाले पात्रों और उनके कार्यों का चित्रण होता है।"14 उपन्यास का संबंध जीवन की विषमताओं, अभावों, द्वंद्वों एवं संघर्षों से युक्त जीवन से है। अतः कोई भी उपन्यासकार अपने विषय का चयन समाज से परे जाकर नहीं कर सकता। यही कारण है कि समाज का यथार्थ प्रतिबिम्ब हमें उपन्यासों में दिखाई देता है।

हिन्दी में उपन्यास लेखन पर पश्चिमी साहित्य और बांग्ला का प्रभाव देखा जा सकता है। भारतेंदु युगीन हिन्दी उपन्यासों पर विचार करते हुए रामचंद्र शुक्ल का कहना है कि 'नाटकों और निबंधों की ओर विशेष झुकाव रहने पर भी बंग भाषा की देखा-देखी नए ढंग के उपन्यासों की ओर ध्यान जा चुका था। इस समय तक बंग भाषा में बहुत से अच्छे उपन्यास निकल चुके थे। इससे प्रेरित होकर ईसाई धर्म में दीक्षित हुए बाबा पद्मनजी ने सन् 1856 ई. में किसी भी भारतीय भाषा में लिखे गए प्रथम उपन्यास 'यमुना पर्यटन' की (मराठी में) रचना की। हिंदी में उपन्यास लेखन का प्रारंभ आचरण पुस्तकों – 'देवरानी जेठानी की कहानी' (पं.गौरीदत्त शर्मा,1870), 'वामा शिक्षक' (मुंशी ईश्वरी प्रसाद, मुंशी कल्याण राय, 1872) एवं 'भाग्यवती' (श्रद्धाराम फिल्लौरी, रचनाकाल 1877, प्रका. 1888 में) के अतिरिक्त उपदेश के लिए लिखी गयी कथाओं से हुआ। तदुपरान्त सन् 1882 ई. में लाला श्रीनिवास दास द्वारा 'परीक्षा गुरु' नामक पहला अंग्रेज़ी ढंग का मौलिक उपन्यास लिखा गया। तत्पश्चात् हिंदी में लिखने वाले कई उपन्यासकार अपनी मौलिक रचनाओं और अनुवादों के माध्यम से पाठकों को हिंदी भाषा की ओर आकर्षित करने में सफल रहे।

किशोरीलाल गोस्वामी प्रेमचन्द पूर्व उपन्यास लेखकों में अग्रणी हैं, जिन्होंने हिंदी भाषा में उपन्यासों की विरलता को लगभग 65 उपन्यास लिखकर समृद्ध किया। वे पहले रचनाकार हैं, जो स्त्रियों के प्रति अत्याधुनिक दृष्टिकोण को उपन्यासों में स्थान देते हैं। उनसे पहले के हिंदी उपन्यास या तो स्त्रियों का चरित्र सुधारने की चिंता से प्रेरित थे या उपन्यास के कलेवर में आचरण संहिताएँ लिख रहे थे। "हिन्दी पट्टी में 'मिरात-उल-उरूस', 'देवरानी-जेठानी की कहानी', 'वामा शिक्षक', भाग्यवती' जैसी आचरण-पुस्तकें उपन्यास के कलेवर में लिखी गयीं थीं, लेकिन सरकारी एवं निजी/संस्थागत प्रयासों से ऐसी पाठ्यपुस्तकें भी तैयार हुईं जो लड़कियों और औरतों को धर्म और सांसारिक कर्तव्यों की शिक्षा देने, उनका आचरण-सुधारने के लिए काम आयीं।"15 किशोरीलाल गोस्वामी ने हिंदी में ऐतिहासिक उपन्यासों की कमी को पूरा किया, साथ ही ऐतिहासिक-रोमानी

उपन्यास लिखकर नयी तरह की पाठकीय रुचि का निर्माण भी किया। उनके उपन्यासों में भारतीय और पश्चिमी शैलियों का अद्भुत समन्वय मिलता है, भाषा के स्तर पर भी उन्होंने देवकीनंदन खत्री का अनुगमन न करके प्रकृति-वर्णन, सौन्दर्य, विरह-वर्णन एवं नखशिख वर्णन के लिए अपनी निजी शैली का आविष्कार किया। उनका रचनाकाल लगभग 40 वर्षों तक फैला हुआ है, जिसमें उनके उपन्यास संक्रमण के दौर से गुज़रते हुए भारतीय, विशेषकर उत्तर भारत की ऐतिहासिक-सांस्कृतिक हलचलों का पता देते हैं। उनके उपन्यास औपनिवेशिक दासता और घुटन में छटपटाते भारतीय मनुष्य की नब्ज़ पर उंगली रखते हैं। किशोरीलाल गोस्वामी का महत्व इस बात में है कि वे पूर्वी और पश्चिमी सभ्यताओं के संघर्ष, उनके विवेचन का प्रयास करते दीखते हैं।

किशोरीलाल गोस्वामी का योगदान इसलिए भी महत्वपूर्ण है क्योंकि उन्होंने हिंदी में ऐतिहासिक रोमांस के उपन्यास लिखे। उन्होंने लगभग 12 उपन्यास इसी को आधार बनाकर लिखे। जैसे कि - (1) हृदयहारिणी वा आदर्श रमणी (1890); लवंगलता वा आदर्शबाला (1890); (3) गुलबहार वा आदर्श भ्रातृ प्रेम (1902); (4) तारा वा क्षात्र-कुल-कमलिनी (1902); (5) कनक-कुसुम वा मस्तानी (1904); (6) हीराबाई वा बेहयायी का बोरका (1904); (7) सुलताना रजिया बेगम वा रंग महल में हलाहल (1904); (8) मल्लिकादेवी वा बंग सरोजिनी (1905); (9) लखनऊ की कब्र वा शाही महलसरा (1906-1916); (10) सोना और सुगन्ध वा पन्नाबाई (1909); (11) लाल कुँवर वा शाही रंगमहल (1909) तथा (12) गुप्त गोदना (1922-23)।

किशोरीलाल गोस्वामी को प्रेमचंद-पूर्व उपन्यासकारों में एकमात्र ऐसा उपन्यासकार माना गया, जिनकी कृतियों में एक साथ अनेक औपन्यासिक प्रवृत्तियों के रंग मिलते हैं –जिनमें- सामाजिकता, आदर्शवादिता, ऐतिहासिकता, कल्पनाशीलता के साथ-साथ तिलिस्म और ऐयारी का इंद्रजाल भी मिलता है। "ऐतिहासिक उपन्यासों में वे ऐतिहासिक तथ्यों के साथ-साथ कल्पनाशीलता को समन्वित करते चलते हैं तो सामाजिक उपन्यासों में वे यथार्थ के साथ-साथ मनोवैज्ञानिक डोर को थामते हुए काल्पनिक छटाएँ भी बिखेरते चलते हैं।"16

किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासों को ब्रजरत्नदास ने तीन चरणों (तिलिस्मी, ऐतिहासिक तथा सामाजिक) में बांटते हुए लिखा है कि -"इनके ऐतिहासिक उपन्यासों में नाम-मात्र को इतिहास का आधार लिया गया है और वे वास्तव में किसी शुद्ध ऐतिहासिक घटना को लेकर नहीं चले। इनके सामाजिक उपन्यास भी इसी प्रकार रोमांचकारी घटनाओं तथा साधारण वासनामय प्रेम को लेकर ही निर्मित हुए हैं और वे कोई शुद्ध

सामाजिक तथ्य या उद्देश्य को लेकर नहीं लिखे गए हैं।"17 गोस्वामी के उपन्यासों में कुछ तिलस्मी करामात एवं साधारण ऐयारी का भी पुट मिलता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इनके उपन्यासों में केवल कोरी कल्पना ही नहीं है, वरन् कुछ सुंदर चित्ताकर्षक वर्णन भी हैं । इनके उपन्यासों में चरित्र-चित्रण का भी सुंदर प्रयास किया गया है। समाज के वासनामय प्रेम का सजीव चित्रण भी मिलता है। चाहे वह जीजा-साली के संदर्भ में हों अथवा प्रेमी-प्रेमिका के संदर्भ में। परंतु यहाँ इस बात को स्वीकारने में कोई गुरेज नहीं होनी चाहिए कि इस वासनामय चित्रण में भी लेखक ने मर्यादा की सीमा को पार नहीं किया है। गोस्वामी जी हर कहीं पर सचेत और सावधान दीखते हैं। हालांकि उन्होंने नायक-नायिकाओं के प्रेम एवं उनके मिलन में उत्पन्न होनेवाली बाधाओं का परिणाम मिलन के साथ दिखाया है। प्रायः ऐसे रोमांस-प्रधान उपन्यासों का अंत सुखांत है। जिसमें पुरानी परंपरा को ही प्रधान रूप से गोस्वामी ग्रहण करते दीखते हैं। "परंतु तब भी यह उसके बाहर विस्तृत संसार के अन्य वर्ण्य वस्तुओं की ओर भी झुके हैं और इनका समावेश भी अपने उपन्यासों में इतस्ततः किया है। लेकिन वह गौण ही रह गया है।"18

वैसे तो ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की परंपरा भारतीय भाषाओं में बहुत पहले से ही आरंभ हो चुकी थी परंतु हिन्दी में सर्वप्रथम ऐतिहासिक उपन्यास लिखने का श्रेय किशोरीलाल गोस्वामी को ही दिया जाता है। उनके द्वारा रचित 'कुसुम कुमारी' को पहला ऐतिहासिक उपन्यास होने का गौरव प्राप्त है। पर वास्तव में इसे ऐतिहासिक उपन्यास नहीं कहा जा सकता है। कथा ऐतिहासिक और सच्ची घटना पर अवलंबित है इतना ही कह देना पर्याप्त नहीं। अर्थात् जिस तरह भाव को रसानुभूति की श्रेणी तक पहुँचाने के लिए तथ्यों में परिवर्तन किया जा सकता है, उसी तरह की स्वतंत्रता का अवसर यहाँ भी मान्य है, क्योंकि ऐतिहासिक उपन्यास में इतिहास का सूखा ठट्ठर खड़ा करना नहीं होता, उसमें प्राणप्रतिष्ठा भी करनी पड़ती है। जिस समय किशोरीलाल गोस्वामी ने उपन्यास लेखन के क्षेत्र में पदार्पण किया था, उस समय केवल मात्र देवकीनंदन खत्री ही ऐसे रचनाकार थे, जिन्होंने उपन्यास लेखन को गंभीरता से लिया था। देखा जाए तो देवकीनंदन खत्री एवं किशोरीलाल गोस्वामी; दोनों ही उपन्यास के पाठकों के निर्माण का कार्य कर रहे थे । देवकीनंदन खत्री द्वारा संपादित मासिक पत्र 'उपन्यास लहरी' एवं किशोरीलाल गोस्वामी द्वारा संपादित पत्र 'उपन्यास' शीर्षक इस दिशा में चिंतन के परिणाम थे । 'उपन्यास' शीर्षक मासिक पत्र में किशोरीलाल गोस्वामी ने स्वयं के उपन्यासों को धारावाहिक के रूप में प्रकाशित किया । इसके माध्यम से गोस्वामी ने पाठकों का ध्यान अपने उपन्यासों की ओर आकर्षित करने का कार्य किया । किशोरीलाल गोस्वामी ने 'उपन्यास' को मासिक पुस्तक कहते हुए अपने उपन्यासों का

विज्ञापन भी किया । इसके अनेक प्रमाण हमें उनके उपन्यासों के अंतिम पृष्ठ पर छपे विवरण से ज्ञात होता है। सन् 1890 ई. में प्रकाशित उपन्यास 'लवंगलता वा आदर्शबाला' एवं 'हृदयहारिणी वा आदर्शरमणी' के संदर्भ में गोस्वामी ने जो विज्ञप्ति निकाली थी, उसका एक नमूना इस प्रकार है - "जिन उपन्यास-प्रेमियों को इस मासिक पुस्तक का ग्राहक होना हो, वे शीघ्र ही दो रूपये भेज कर ग्राहक बन जाएं। और जो नमूना देखना चाहें, वे चार आने का टिकट भेजें। हाँ इतना ध्यान रहेगा कि जो महाशय चार आने भेज कर नमूना मंगावेंगे वे यदि पीछे ग्राहक हो जायेंगे, तो उनसे चार आने मुजरे देकर पौने दो रूपए ही लिए जाएंगे। वी.पी. का खर्च एक आना ग्राहकों को ही देना होगा। हां, डाक महसूल कुछ नहीं लगेगा। इस विषय की चिट्ठी-पत्री आदि नीचे लिखे ठिकाने से भेजना चाहिए।"

श्री किशोरीलाल गोस्वामी

सम्पादक "उपन्यास मासिक-पुस्तक

श्री सुदर्शन प्रेस" वृंदावन (मथुरा) यू.पी."

इसी तरह 'माधव-माधवी वा मदन-मोहिनी' के मुखपृष्ठ के पीछे छपी विज्ञप्ति में यह बताया गया है कि 'उपन्यास' मासिक पुस्तक क्या है? रंगीले, सजीले, भड़कीले, चटकीले, अनूठे, अनोखे जानदार और शानदार बेजोड़ उपन्यासों की यह बहुत पुरानी और बढ़िया मासिक पुस्तक है जो लगभग पिछले सोलह बरसों से निकल रही है। इस मासिक पुस्तक में हर महीने चुहचुहाते और फड़कते हुए चित्र-विचित्र घटनाओं से भरे हुए नए-नए उपन्यास छपा करते हैं जिनका हर पेज दिलचस्पी, तर्बीयतदारी, रोचकता और मनोहरता से लबालब भरा रहता है।"19

प्रणयिनी परिणय' किशोरीलाल गोस्वामी का पहला उपन्यास है, जिसका लेखन कार्य तो सन् 1887 ई. में ही पूर्ण हो गया था लेकिन इसका प्रकाशन सन् 1890 ई. में संभव हो पाया । गोस्वामी ने वृंदावन स्थित स्वयं के श्रीसुदर्शन प्रेस से अपने 32 उपन्यासों का प्रकाशन किया, जिनकी कीमत डिमाई अठपेजी आकार के 24 से 28 पृष्ठों की दो आने, 100 पृष्ठों तक के उपन्यास की 8 आने तथा 450 पृष्ठों तक के उपन्यास की दो रुपये रखी गई । पाठकों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए उन्होंने 32 उपन्यासों (लगभग पाँच हजार पृष्ठ) के सेट का मूल्य मात्र 26 रुपये 3 आने रखा । सन् 1909 के आसपास किशोरीलाल गोस्वामी कानूनी अड़चनों में फंस गये जिसके कारण उन्हें 'उपन्यास मासिक' पुस्तक बंद करनी पड़ी । परंतु सन् 1913 ई. में उन्होंने वृंदावन (मथुरा) में पुनः 'स्वकीय प्रेस' की स्थापना की और अपने उपन्यासों का पुनर्मुद्रण आरंभ किया । सन् 1915 ई. में किशोरीलाल गोस्वामी ने 'उपन्यास मासिक' पत्र का पुनः प्रकाशन आरंभ किया । यह लगभग 40 पृष्ठों की पत्रिका थी । डाक खर्च सहित 'उपन्यास मासिक' का वार्षिक शुल्क केवल दो रुपये था । जिसमें उनके उपन्यास

निरंतर धारावाहिक रूप में छपते रहे थे। ज्ञानचंद जैन के अनुसार – "उनके इस पत्र ने ग्राहकों को दो रूपये में घर बैठे 480 पृष्ठों के उपन्यास सुलभ करके उपन्यास को हिन्दी की सबसे लोकप्रिय विधा बना देने में महत्त्वपूर्ण योगदान किया। उनके बहुत से बहुचर्चित उपन्यास इसी पत्र में धारावाहिक रूप में छपे।"20

हिन्दी में ऐतिहासिक उपन्यास लिखने की परंपरा की शुरुआत किशोरीलाल गोस्वामी से माना जाता है। हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों को हम अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं – "प्रथम उत्थान काल (1890-1915), द्वितीय उत्थान काल (1917-1929) और तृतीय उत्थान काल (1930 से आज तक), तो प्रथम उत्थान काल में पं.किशोरीलाल गोस्वामी ही अपनी रचनात्मकता से पूरे औपन्यासिक परिदृश्य को घेरे हुए मिलते हैं। किशोरीलाल गोस्वामी के प्रभाव से कई रचनाकारों ने इस क्षेत्र में अपना उल्लेखनीय योगदान दिया।"21

प्रथम उत्थान-काल के अंतर्गत बाबू गंगाप्रसाद गुप्त के ऐतिहासिक उपन्यासों को देख सकते हैं, जिनमें 'नूरजहाँ' (सन्1902), 'वीरपत्नी '(1903), 'कुंवरसिंह सेनापति' (1903), 'पूना में हलचल' (1903) एवं 'हम्मीर' (1904) जैसे ऐतिहासिक उपन्यास महत्वपूर्ण माने जाते हैं, इन उपन्यासों में पात्रों के चरित्र-चित्रण पर विशेष बल दिया गया है। किशोरीलाल गोस्वामी का अनुकरण कर केदारनाथ शर्मा ने 'तारामती'(सन् 1901 ई.), ब्रज बिहारी सिंह ने 'कोटा रानी'(सन् 1902) बलदेव प्रसाद मिश्र ने 'पृथवीराज' एवं 'पानीपत' (सन् 1902) जैसे ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना की।

अंग्रेज़ी साहित्य में यद्यपि अठारहवीं शताब्दी के अंत में ही उपन्यासों में इतिहास का प्रयोग होने लगा था, किन्तु सही अर्थों में इतिहास का आधार लेकर उपन्यास लिखने का कार्य सर वाल्टर स्कॉट द्वारा प्रारंभ हुआ। सर वाल्टर स्कॉट का प्रथम ऐतिहासिक उपन्यास 'वेवर्ली' सन् 1814 ई. में प्रकाशित होते ही अंग्रेज़ी साहित्य में तहलका मच गया। तदुपरान्त उनके कई श्रेष्ठ ऐतिहासिक उपन्यास प्रकाशित हुए। स्कॉट अंग्रेज़ी के प्रथम और सर्वाधिक लोकप्रिय ऐतिहासिक उपन्यासकार माने जाते हैं। भारत में औपनिवेशिक शासन के परिणामस्वरूप अंग्रेज़ी उपन्यासों की तर्ज़ पर प्रादेशिक भाषाओं में भी ऐतिहासिक उपन्यास लिखे जाने लगे। बांगला और मराठी में सबसे पहले ऐतिहासिक उपन्यास लिखे गये और उपन्यास के प्रादुर्भाव-काल से ही उपन्यासों में इतिहास का प्रयोग होने लगा। बंकिमचन्द्र चटर्जी ने 'दुर्गेशनंदिनी'(1865 ई.),'मृणालिनी'(1869

ई.),'राजसिंह'(1881 ई.) एवं हरिनारायण आप्टे ने 'उषाकाल'(1895 ई.),'सूर्योदय','सूर्यग्रहण' एवं 'चन्द्रगुप्त' इत्यादि में इतिहास को आधार बनाया और श्रेष्ठ उपन्यासों की रचना की।

सन् 1890 ई. में 'प्रणयिनी परिणय' से रचना यात्रा आरंभ करनेवाले किशोरीलाल गोस्वामी भारतेन्दु परवर्ती और पूर्व द्विवेदी युग में पैंसठ (65) उपन्यासों, कुछ नाटकों और कई निबंधों की रचना कर अपने समकालीन और परवर्ती रचनाकारों के प्रेरणास्रोत बने। वे बालकृष्ण भट्ट, रत्नचंद्र एवं जगन्मोहन सिंह की परंपरा के उपन्यासकार थे। भारतेंदु हरिश्चन्द्र की प्रेरणा से जो लोग साहित्य-लेखन में प्रवृत्त हुए उनमें किशोरीलाल गोस्वमी का नाम प्रमुख है।

एक समय था जब हिन्दी में किशोरीलाल गोस्वामी के उपन्यासों की धूम थी। उस समय एक पाठक वर्ग ऐसा भी था जो मुख्य रूप से तिलिस्मी-ऐयारी, जासूसी एवं राष्ट्रीय भावनाओं से ओतप्रोत ऐतिहासिक एवं घटना-प्रधान सामाजिक उपन्यासों से अपना मनोरंजन करते थे। इस वर्ग को किशोरीलाल गोस्वामी ने अपना प्रेमी पाठक बना लिया था। उनके उपन्यास– "लखनऊ की कब्र वा शाही महलसरा', 'अंगूठी का नगीना', 'माधवी माधव वा मदन-मोहिनी' एवं 'कुसुम कुमारी वा स्वर्गीय कुसुम' इत्यादि इतने अधिक पढ़े जाते थे कि पुस्तकालयों में उनके आरंभ, अंत या बीच के पन्ने फटे मिलते थे।"22

रसिक पाठक समुदाय जो अभी पूरी तरह पाश्चात्य रंग में रंगा नहीं था, जिनकी संवेदनाओं के तार अभी तक रीतिकालीन नख-शिख वर्णन, नायक-नायिका भेद, प्रेम-विरह से झंकृत होते रहे थे, उस पाठक समुदाय की रुचि को उपन्यास की ओर मोड़ने का काम किशोरीलाल गोस्वामी ने किया। उन्होंने अनेक ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को उपन्यासों की रचना का आधार बनाया, जिनमें इतिहास कम, कल्पना अधिक है। इस संबंध में अपने दृष्टिकोण को स्पष्ट करते हुए गोस्वामी ने लिखा है कि – "हमने अपने बनाए उपन्यासों में ऐतिहासिक घटना को गौण और अपनी कल्पना को मुख्य रक्खा है और कहीं-कहीं तो कल्पना के आगे इतिहास को दूर ही से नमस्कार कर दिया है।"23

किशोरीलाल गोस्वामी ने अपने अधिकांश उपन्यासों में मुस्लिम शासनकाल को कथानक का आधार बनाया है। गुलामवंश की सुल्ताना रज़िया बेग़म (तेरहवीं शताब्दी) से लेकर नवाबों के पतन तक के रचनाकार क्योंकि मुसलमान थे, अतः किशोरीलाल गोस्वामी का मानना था कि उन्होंने अपनी जाति के शासकों के पक्ष में हिंदुओं को नीचा दिखाने के लिए इतिहास की घटनाओं को तोड़ा-मरोड़ा है और अनेक प्रकार की काल्पनिक एवं

असत्य कथाएं भर दी हैं। इसी से गोस्वामी ने यूरोपीय लेखकों की सामग्री से सहायता लेने का निश्चय किया। "लेकिन दूसरों पर आरोप लगाना जितना सरल है, स्वयं निष्पक्ष रहकर काम करना उससे भी अधिक कठिन होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि किशोरीलाल गोस्वामी ने ऐतिहासिक घटनाओं को अपने संस्कारों के अनुरूप ढालने में कम प्रयत्न नहीं किया है। निर्दोष जनता पर अत्याचारी शासकों के काबिज़ होने के किस्सों से किसका मन क्षुब्ध नहीं होता।"24 इनमें से कुछ लोग (शासक) स्वभाव से ही विलासी थे। दूसरी ओर राजपूतों की आन-बान और शान, उनकी वीरता एवं उनके चरित्र की उज्ज्वता में भी किसी को संदेह नहीं है। लेकिन किशोरीलाल गोस्वामी ने बादशाहों एवं नवाबों की लंपटता, चरित्रहीनता, कामुकता एवं छलकपट का जैसा वर्णन अपने उपन्यासों (लवंगलता, मल्लिकादेवी, हृदयहारिणी) में किया है, वह निश्चित रूप से अशोभनीय, अन्यायपूर्ण एवं अतिरंजित है। "मुस्लिम संस्कृति के किसी भी शुभ पक्ष की ओर इनकी दृष्टि गई ही नहीं। साथ ही इनके उपन्यासों में कहीं-कहीं काल-दोष भी पाया जाता है। पंडितराज जगन्नाथ सत्रहवीं शताब्दी के कवि थे और शाहजहाँ के शासन काल में जीवित थे, यहाँ तक कि 'पंडितराज' की उपाधि उन्हें शाहजहाँ से ही प्राप्त हुई थी लेकिन किशोरीलाल गोस्वामी ने उन्हें अपने उपन्यास 'सोना और सुगंध वा पन्नाबाई' में अकबर के दरबार में दिखाया है।"25

उपर्युक्त उदाहरण की पुष्टि आचार्य रामचंद्र शुक्ल के कथन से भी होती है। इसके अतिरिक्त किशोरीलाल गोस्वामी पर समुदाय विशेष के प्रति पूर्वाग्रह रखने का आरोप भी कई आलोचकों एवं समकालीन पत्र-पत्रिकाओं द्वारा लगाया गया, जिनमें 'समालोचक' पत्रिका का उल्लेख विशेष रूप से किया जाना चाहिए। परंतु उनके उपन्यासों को धैर्य से पढ़ने पर कई ऐसी बातें सामने आती हैं जो किशोरीलाल गोस्वामी को अपने समय से आगे का कालजयी रचनाकार सिद्ध करती हैं। उदाहरण के लिए 'सुल्ताना रज़िया बेगम' उपन्यास को देख सकते हैं जिनमें उदार सांप्रदायिक दृष्टिकोण का परिचय देते हुए स्वामी ब्रह्मानंद रज़िया से कहते हैं – "खुदा के सामने हिन्दू और मुसलमान दोनों बराबर हैं। हिन्दू उसे राम कहकर पूजते हैं और मुसलमान ख़ुदा कहकर। हिन्दू उसकी मूरत बनाकर पूजते हैं और मुसलमान बगैर मूरत रक्खे ही उसका ध्यान करते हैं। लेकिन ख़ुदा हिन्दू और मुसलमान दोनों का एक ही है और वह दोनों की परस्तिश से एक-सा खुश होता है। मज़हबी तअस्सुब को बिलकुल छोड़कर हिन्दू और मुसलमान को एक-सा समझना ही उस बादशाह के हक़ में बिहतर होगा, जो हिन्दुस्तान की सल्तनत की बागडोर अपने हाथ में लेकर उसे बराबर क़ायम रखना चाहे।"26 इस उपन्यास में

गोस्वामी ने यह भी दिखाया गया है कि रज़िया स्वामी ब्रह्मानंद की प्रेरणा से एक मंदिर को नष्ट करने से बचाती है। अतः किशोरीलाल गोस्वामी के सांप्रदायिक उदारता से परिपूर्ण इन विचारों एवं प्रसंगों को देखते हुए उन्हें 'मुसलमान विरोधी' कहना उचित नहीं लगता है।

उक्त संदर्भ में यह कहना भी अनुचित नहीं होगा कि किशोरीलाल गोस्वामी ही वह पहले रचनाकार हैं जिन्होंने अपने उपन्यासों में स्त्रियों के प्रति आधुनिक दृष्टिकोण को स्थान देने की पहल की। गोस्वामी से पहले जो हिन्दी उपन्यास लिखे जा रहे थे, वे या तो स्त्रियों का चरित्र सुधारने की चिंता से प्रेरित थे अथवा उपन्यास के कलेवर में आचरण संहिताओं को ही लिखे जाने की चेष्टा अधिक की जा रही थीं। किशोरीलाल गोस्वामी वे पहले उपन्यासकार हैं जिन्होंने 'कुसुम कुमारी वा स्वर्गीय कुसुम' उपन्यास में पहली बार देवदासी-प्रथा की आलोचना की। हिन्दी में देवदासी-प्रथा पर उपन्यास रचना करने का श्रेय सबसे पहले लिखने उन्ही को जाता है। उदाहरणार्थ – "अब इस घोर कलिकाल में यह सत्यानासिनी प्रथा बंद हो जाए तो अच्छा है क्योंकि धर्म की व्यवस्था देश, काल और पात्र के अनुसार ही की जाती है।"27

किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास नहीं, कल्पना का साम्राज्य था। बीसवीं शताब्दी के प्रथम दशक में किशोरीलाल गोस्वामी ने पाठकों की रुचि को ध्यान में रखते हुए बड़ी संख्या में सामाजिक, ऐतिहासिक, तिलिस्मी-ऐयारी एवं जासूसी उपन्यासों की रचना की जिनमें निम्नलिखित 12 बहुचर्चित सामाजिक तथा ऐतिहासिक उपन्यास उनके 'उपन्यास' मासिक पत्रिका में धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुए थे– 1. 'कुसुमकुमारी वा स्वर्गीय कुसुम' (सामाजिक उपन्यास), 2. 'राजकुमारी' (सामाजिक उपन्यास) 3. 'लीलावती वा आदर्श सती' (सामाजिक उपन्यास) 4.'चपला वा नव्यसमाज-चित्र' (सामाजिक उपन्यास) 5.'माधवी-माधव वा मदन-मोहिनी'(सामाजिक उपन्यास) 6.तारा 7.'सुल्ताना रज़िया बेगम' (ऐतिहासिक उपन्यास) 8. 'हृदयहारिणी वा आदर्श रमणी' 9. 'लवंगलता वा आदर्श बाला' 10. 'मल्लिका देवी वा बंगसरोजिनी' 11. 'पन्नाबाई' तथा 12. 'लखनऊ की कब्र वा शाही महलसरा' (आठ भाग)।

उपर्युक्त उपन्यासों को देखते हुए कह सकते हैं कि किशोरीलाल गोस्वामी ने अपने लेखन से परवर्ती साहित्यिकों के हृदय में अपनी महत्वपूर्ण छवि बनाई।

हिन्दी में ऐतिहासिक रोमांस लिखने की परंपरा किशोरीलाल गोस्वामी ने ही शुरू की। सन् 1890 ई. में प्रतापनारायण मिश्र की प्रेरणा से उन्होंने 'हृदयहारिणी वा आदर्श रमणी' शीर्षक ऐतिहासिक रोमांस की रचना की, जो मिश्र जी द्वारा संपादित 'हिन्दुस्तान' के कई अंकों में प्रकाशित हुई। सन् 1890 ई. में ही उन्होंने 'लवंगलता वा आदर्शबाला' की रचना भी की। अपने समकालीन उपन्यासकारों की अपेक्षा किशोरीलाल

गोस्वामी में समाज-सुधार की भावना अधिक थी, कहना अनुचित नहीं होगा। लाला श्रीनिवासदास ने सन् 1882 ई. में 'परीक्षा गुरु' को नयी चाल की पुस्तक कहा था, उसी विधा को अपनी समस्त प्रतिभा से संपन्न करने का कार्य किशोरीलाल गोस्वामी ने भी किया है।

"किशोरीलाल गोस्वामी ने दो प्रकार के ऐतिहासिक उपन्यास लिखे। पहली श्रेणी के उपन्यासों में ऐतिहासिकता में कल्पना समन्वित कर उसे पाठकों के लिए कम बोझिल बनाने का प्रयास किया गया है। दूसरी श्रेणी में वे उपन्यास आते हैं जिनमें किशोरीलाल गोस्वामी ने सत्य, ज्ञान और कल्पना-शक्ति के आधार पर विकृत तथ्यों में संशोधन द्वारा पाठकों को देश के इतिहास का ज्ञान उपलब्ध कराने का प्रयास किया है।"28 किशोरीलाल गोस्वामी ने अधिकतर घटना-प्रधान उपन्यास ही लिखे, जिनमें चित्रित घटनाओं का संबंध प्रायः प्रेम, नैतिकता, सामाजिक, सास्कृतिक, धार्मिक एवं आर्थिक पतन तथा नवोदित मध्यवर्ग से है। नवोदित शहरी मध्यवर्ग की झलक हमें 'चपला वा नव्य समाज-चित्र' में भी मिलती है। इस उपन्यास के शीर्षक को ध्यान से देखने पर ज्ञात होता है कि वास्तव में किशोरीलाल गोस्वामी का इस उपन्यास में 'नव्य समाज-चित्र' कहने के पीछे क्या उद्देश्य था। यह उपन्यास मध्यवर्ग की समस्याओं को चित्रित करने में सफल रहा है। 'नव्य समाज चित्र' नामक उपनाम से स्पष्ट है कि यह नये भारत के नागरिक समाज का नया चित्र है अर्थात् उभरता ग्रामीण और शहरी मध्यवर्ग। इस नये मध्यवर्गीय समाज में यौन-हिंसा, व्यभिचार, रिश्वतखोरी एवं मद्यपान जैसी कुरीतियों का भी उदय हो चला था। समाज में एक ओर जहाँ बेरोज़गारी और आर्थिक तंगी छाई हुई थी वहीं दूसरी ओर आधुनिक सभ्यता के नाम पर समाज में उच्छृंखलता और अमानुषिकता का भी बोलबाला था। इस उच्छृंखलता के कारण ही नैतिक मूल्यों का ह्रास भी धीरे-धीरे समाज से होता जा रहा था। परंतु 'चपला वा नव्य समाज-चित्र' उपन्यास की बहुत बड़ी विशेषता यह है कि किशोरीलाल गोस्वामी ने इस उपन्यास में स्त्री पात्रों को कहीं भी विवश अथवा असहाय नहीं दिखाया है वरन् स्त्री-शक्ति व सामर्थ्य को अधिक मुखर रूप में प्रस्तुत किया है। चपला,कामिनी,सौदामिनी एवं मालती अपनी सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को स्वयं सुलझाने में समर्थ है, इसका प्रमाण हमें इस उपन्यास में उस समय मिलता है जब इनके पति विदेश चले जाते हैं और अपनी जीविकोपार्जन के लिए ये स्त्रियाँ कसीदे काढ़कर, बुनाई कर एवं नौकरी करके अपना घर चलाती हैं। इस उपन्यास में किशोरीलाल गोस्वामी ने स्त्री को आत्मनिर्भर दिखाने का प्रयास किया है। 'चपला' के अतिरिक्त 'माधवी-माधव वा मदन-मोहिनी', 'लीलावती वा आदर्श सती', 'कुसुमकुमारी वा स्वर्गीय कुसुम' एवं 'मल्लिकादेवी वा बंग सरोजिनी' उपन्यासों में मध्यवर्गीय समाज की समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण किया है

। इन सामाजिक उपन्यासों के अतिरिक्त किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक रोमांसों में भी हमें अनेक ऐसी समस्याएं दृष्टिगोचर होती हैं जो उभरते मध्यवर्ग की जटिलताओं को प्रस्तुत करते हैं।

"किशोरीलाल गोस्वामी के ऐतिहासिक रोमांस उपन्यासों पर रेनाल्ड्स के उपन्यासों- जिनके अनुवाद सन् 1890-1900 के बीच और बाद में हिन्दी में उपलब्ध हुए– का प्रभाव देखा जा सकता है। उर्दू और हिन्दी के पाठकों को रहस्य, रोमांच और रति व्यापार से भरे इन उपन्यासों ने बहुत प्रभावित किया।"29

उपर्युक्त विवरण को देखते हुए ही यद्यपि कुछ विद्वानों ने बीसवीं शताब्दी के उपन्यास को मोहभंग का उपन्यास कहा है। वस्तुतः बीसवीं शताब्दी राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक, दार्शनिक और वैज्ञानिक द्वंद्वों एवं अन्तर्द्वन्द्वों की शताब्दी रही है जिनका प्रतिफलन विश्वयुद्धों, जन-क्रांतियों और मुक्ति-संघर्षों में होता रहा है।

किशोरीलाल गोस्वामी - ऐतिहासिक उपन्यास लेखन की परंपरा के आरंभकर्ता के रूप में किशोरीलाल गोस्वामी का नाम अग्रगण्य है। इस परंपरा में आगे चलकर जिन रचनाकारों ने इस पद्धति को अपनाया उनमें – बालकृष्णभट्ट, लाला श्रीनिवास दास, अम्बिकादत्त व्यास, देवकीनंदन खत्री, मेहता लज्जाराम शर्मा, राधाकृष्ण दास, गोपालराम गहमरी, भुवनेश्वर मिश्र, जैनेन्द्र किशोर, हरिकृष्ण कोहली 'जौहर', जयरामदास गुप्त, गंगाप्रसाद गुप्त, दुर्गाप्रसाद खत्री, ब्रजनंदन सहाय, अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध', चन्द्रशेखर पाठक, ठाकुर लाल जी सिंह गहरवार, राधाचरण गोस्वामी, मन्नन द्विवेदी 'गजपुरी' एवं हनुवंतसिंह रघुवंशी प्रमुख हैं। ऐतिहासिक उपन्यासों की इस श्रृंखला में इतिहास कम और कल्पना की मात्रा अधिक है , इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता। ऐतिहासिक उपन्यासों के साथ-साथ इस कड़ी में जासूसी, तिलिस्मी एवं ऐयारी प्रधान उपन्यासों की भी रचनाएँ जुड़ती हैं। जिसे सामाजिक परिस्थितियों से परेशान, लेकिन हवाई ऐन्द्रजालिक स्वप्न-लोक में डूबे रहनेवाले की एक शाश्वत खोज कही जा सकती है। यथार्थ से पलायन की जो प्रवृत्ति इन रचनाओं में दीखती हैं वह मन से हारे हुए व्यक्ति की स्वनिर्मित रचना-संसार है। जहाँ जाकर वह सबकुछ भूल जाना चाहता है। बावजूद इसके इस युग परंपरा की उपेक्षा नहीं की जा सकती। इनका अपना एक महत्व है और साहित्य-यात्रा का आरंभिक दौर भी। अतः इस पथ-यात्रा के सारथी के रूप में किशोरीलाल गोस्वामी सदैव स्मरणीय रहेंगे। किशोरीलाल गोस्वामी के रचनात्मक योगदान को पुनः याद किये जाने की आवश्यकता है।

संदर्भ-ग्रंथ

1. धीरेन्द्र वर्मा, 'हिन्दी साहित्य कोश' : (भाग–1), ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी-1, बनारस, द्वितीय संस्करण : सन् – 1963 : पृष्ठ. 96

2. विनोद तिवारी : अजय आनंद, (संपा) 'उपन्यास : कला और सिद्धांत' (भाग–1), अनन्य प्रकाशन, ई-17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032, प्रथम संस्करण : 2016 : पृष्ठ. 81, 84
3. धीरेन्द्र वर्मा, 'हिन्दी साहित्य कोश : (भाग–1)', ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी-1, बनारस द्वितीय संस्करण : सन्- 1963 : पृष्ठ. 203
4. वही, पृष्ठ. 97
5. वही
6. विनोद तिवारी, अजय आनंद, (संपा.) 'उपन्यास : कला और सिद्धांत (भाग –1)', अनन्य प्रकाशन, ई-17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली –110032, प्रथम संस्करण : 2016 : पृष्ठ. 84-85
7. धीरेन्द्र वर्मा, 'हिन्दी साहित्य कोश : (भाग – 1)', ज्ञानमंडल लिमिटेड, वाराणसी-1, (बनारस) –6173-20, द्वितीय संस्करण : संवत् 2020 : पृष्ठ. 154
8. अमरनाथ, 'हिन्दी आलोचना की पारिभाषिक शब्दावली', राजकमल प्रकाशन प्रा.लि.,1-बी,नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्रथम छात्र संस्करण : 2012 : पृष्ठ. 264-265
9. वही, पृष्ठ. 91-92
10. के.एन.पणिक्कर,'औपनिवेशिक भारत में सांस्कृतिक और विचारधारात्मक संघर्ष' (अनु.) आदित्यनारायण सिंह बी-7, सुभाष चौक, लक्ष्मी नगर, दिल्ली-110092, प्रथम हिन्दी संस्करण : 1995 : पृष्ठ. 12-13
11. विनोद तिवारी, अजय आनंद, (संपा.) 'उपन्यास : कला और सिद्धांत (भाग – 2)', अनन्य प्रकाशन, ई-17, पंचशील गार्डन, नवीन शाहदरा, दिल्ली –110032, प्रथम संस्करण : 2016 : पृष्ठ. 45
12. भारतभूषण अग्रवाल, 'हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव', प्रकाशक दिग्दर्शनचरण जैन, ऋषभचरण जैन एवं संतति, 21 दरियागंज, दिल्ली- 6, प्रथम संस्करण : 1971 : पृष्ठ. 21-22
13. गोविन्द जी, 'हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासों में इतिहास-प्रयोग', कल्पना प्रकाशन, 7, कबाड़ी बाज़ार, मेरठ कैंट – 250001, प्रथम संस्करण : 1974 : पृष्ठ. 33-34
14. उषा सक्सेना, 'हिन्दी उपन्यासों का शिल्पगत विकास', शोध साहित्य प्रकाशन, 577, शाहगंज, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण : 1972 : पृष्ठ. 21
15. गरिमा श्रीवास्तव (2014), 'नवजागरण, स्त्री-प्रश्न और आचरण-पुस्तकें', प्रतिमान, वर्ष – 2,खण्ड – 2, अंक -2 (जुलाई-दिसम्बर) : पृष्ठ. 691
16. गरिमा श्रीवास्तव, 'भारतीय साहित्य के निर्माता : किशोरीलाल गोस्वामी', साहित्य अकादमी, रवीन्द्र भवन, 35 फीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली –110001, प्रथम संस्करण : 2017 : पृष्ठ. 36
17. वही
18. वही
19. वही, पृ. 37-38
20. वही, पृ. 39

21. वही, पृ. 71
22. ज्ञानचंद जैन, 'प्रेमचंद-पूर्व के हिन्दी उपन्यास', आर्य प्रकाशन मंडल, सरस्वती भंडार, गांधीनगर, दिल्ली – 110031, प्रथम संस्करण : 1998 : पृष्ठ. 175
23. गरिमा श्रीवास्तव, 'भारतीय साहित्य के निर्माता : किशोरीलाल गोस्वामी', साहित्य अकादेमी, रवींद्र भवन, 35 फीरोज़शाह मार्ग, नई दिल्ली – 110001, प्रथम संस्करण : 2017 : पृष्ठ. 5 (भूमिका)
24. वही,पृष्ठ. 39
25. वही, पृष्ठ. 6
26. वही, पृष्ठ. 6
27. वही, पृष्ठ. 8
28. वही, पृष्ठ. 64
29. वही, पृष्ठ. 65

****